[redacted]

RNI No. 26281/74 रजि. नं. पी.बी./जे.एल. 0011/2012-14

ओ३म्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब

साप्ताहिक

आर्य मर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का प्रमुख साप्ताहिक पत्र

मूल्य : 2 रु.	
वर्ष: 69	अंक: 49
सृष्टि संवत् 1960853113	
3 मार्च 2013	
दयानन्दाब्द 189	
वार्षिक : 100 रू.	
आजीवन : 1000 रू.	
दूरभाष : 2292926, 5062726	

जालन्धर

वर्ष-69, अंक : 49, 28/3 मार्च 2013 तदनुसार 20 फाल्गुन सम्वत् 2069 मूल्य 2 रु०, वार्षिक 100 रु० आजीवन 1000 रु०

अमृत और आत्मा

श्री आचार्य भद्रसेन, 182-शालीमार नगर होशियारपुर

सभी शास्त्र आत्मा को नित्य और अजर-अमर मानते हैं। अतः सबसे अधिक आत्मा के लिए अमृत शब्द का प्रयोग प्राप्त होता है। उदाहरण के लिए यजुर्वेद 40, 15 (ईशावास्य उप. 17) में कहा है[1] इस शरीर का अन्त भस्म है और यह (आत्मा) गतिशील, अनिल (न + इल-(इला = पृथिवी)) पार्थिव विकारों से रहित और यह (आत्मा) अमृत है। वैसे अनिल वायु को भी कहते हैं और दोनों शब्द यहां इकट्ठे आए हुए हैं। इस मन्त्र के दूसरे चरण में शरीर का वर्णन है, तथा प्रथम चरण में विनाशशील शरीर से भिन्न अमृत शब्द से आत्मा का ही वर्णन है। अतः वायु और अनिल दोनों शब्द यहां वायु के वाचक न होकर अपने-अपने शाब्दिक धात्वर्थ मात्र को ही कहते हैं क्योंकि ये दोनों यहां अमृत के साथ जुड़कर (उसके विशेषण बने)/प्रयुक्त हुए हैं। वायु शब्द व धातु से बनता है, जिसका अर्थ है गति वाला होना। जहां बाहर वाला अर्थात भौतिक वायु अपनी गति के लिए प्रसिद्ध है, वहां आत्मा भी परमात्मा की व्यवस्था से अपने कर्मों के अनुरूप अनेक योनियों में गति करता है। वैसे आत्मा शब्द अत् धातु से बनता है, जिसका अर्थ है सदा गतिशील रहना (= सातत्य गमने)। न + इल को अनिल कहते हैं, इला = पृथिवी का नाम है। अतः अनिल शब्द का यहां भाव है कि यह पार्थिव पदार्थों की तरह न जलता है, न ही गलता है, न कटता है और न ही इसमें किसी प्रकार का विकार आता है।[2] अर्थात हम सबकी आत्मा एक ऐसा तत्त्व है, जोकि अजर-अमर है। दुनिया का किसी प्रकार का विकार इस को विकृत नहीं करता। इसीलिए इसका नाम आत्मा है, क्योंकि यह सदा एक रस रहता है। हां, इसके शरीर में ही परिवर्तन आता है, इसके अपने रूप में नहीं। जबकि ज्वलनशील चीज़ें किसी न किसी आग से जल कर नष्ट हो जाती हैं और कुछ जल के सम्पर्क से गल सकती हैं। कुछ किसी से कट कर नष्ट हो जाती हैं और कुछ सूख कर आंखों से ओझल हो जाती है।

वेदमन्त्रों और उपनिषदों में अधिकतर आत्मा[3] के लिए, अमृत शब्द का प्रयोग हुआ है। इस अमरणधर्मा आत्मा के स्वरूप का अनुभव कराने के लिए ही उपनिषदों में अमृत और अमृतत्व शब्दों द्वारा सबका ध्यान इस ओर आकर्षित किया है। आत्मा की अनुभूति का अनुभावात्मक विश्लेषण विविध दर्शनों में मिलता है। हां, आज के सत्संग को समाप्त करने से पूर्व सभी श्रोताओं का ध्यान एक प्रश्न और उत्तर की ओर ले जाना चाहता हूं। क्योंकि पहले सत्संग का उपसंहार करते हुए सोमप्रिय ने कहा था, कि यह चर्चा अमृत के पान से अमर होने की कथा से चली थी, जिससे सिद्ध होता है कि वे पहले अमर नहीं थे। अतः यहां अमृत शब्द जीते रहने की भावना, चाहना से जुड़ा हुआ है।

आज के सत्संग के प्रारम्भ होने से पूर्व सुदर्शन भी कह रहा था कि आत्मा के अजर-अमर होने की बात सुनकर हमारे सामने विशेष रूप से एक समस्या आती है, कि आत्मा जब अमर है, तो उसे अमरता की चाहना नहीं होनी चाहिए ? दुनिया में इच्छा, चाहना उसी चीज़ की होती है, जिसको वह प्राप्त करना चाहता है या उसको यह शक हो, कि यह चीज सदा मेरे पास नहीं रहेगी, तब वह उसको सदा अपने पास रखने के लिए उसकी इच्छा और हर प्रकार का प्रयास करता है। जब सबकी आत्मा अजर-अमर है, तो आत्मा को तो अमरता की चाहना होनी ही नहीं चाहिए, वह तो सदा ही अमर है। इच्छा सदा अप्राप्त को प्राप्त करने के लिए ही होती है।

सोमप्रिय और सुदर्शन दोनों का प्रश्न मूलरूप से एक ही है। यह चाहना उन्हीं व्यक्तियों को होती है, जो आत्मा के अमर स्वरूप का अनुभव नहीं करते या शरीर और आत्मा के स्वरूप को अलग-अलग नहीं समझते। जो दोनों को एक ही समझते हैं या दोनों में से शरीर को अधिक प्रमुखता देते हैं। जिसको हम जीवन कहते हैं, वह जीवन या जीवित स्थिति तभी होती है, जब ईश्वर की कर्मफल व्यवस्था के अनुसार जीव अपने कर्मों का फल प्राप्त करने के लिए शरीर, मन आदि के साथ जुड़ता है। इसी जीवित स्थिति या जीवन के लिए भी अमृत शब्द का प्रयोग होता है। अतः यहां जीवन के पूर्व रूप को समझना भी आवश्यक है।

जीवन-जन्म से प्रारम्भ होता है, जीव (प्राणने) धातु से जीवन शब्द बनता है। अतः सांस लेने, जीने के अर्थ में जीवन शब्द आता है। हमारा जीवन पहली सांस से अन्तिम सांस तक चलता है। इसमें यथा समय ज़रूरत के अनुसार खान-पान, रहन-सहन, वस्त्रधारण अन्य व्यवहार्य वस्तुओं का बर्ताव, शिक्षा, चिकित्सा, यथायोग्य, यथापेक्षित रिश्ते-नाते, मित्रों और कारोबारियों आदि के साथ जो व्यवहार चलता है, उसे हम जीवन कहते हैं।[4] अत एव शास्त्रों में जीवन शब्द अनेक अर्थों में आता है।[5]

(शेष पृष्ठ 6 पर)

1. वायुरनिलममृतमथेदं भस्मान्तं शरीरम्। यजुर्वेद 40,15
2. अपाङ् प्राङेति स्वधया गृभीतोऽमर्त्योमर्त्येन सयोनिः ऋ. 1,164,38
   न जायते म्रियते वा विपश्चिन्नायं कुतश्चिन्न बभूव कश्चित्।
   अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे ॥कठ 1,2,24
   गीतकार के शब्दों में-
   न जायते म्रियते वा कदाचिन्नायं भूत्वा वा न भूयः।
   अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे ॥2, 20
   अन्तवन्त इमे देहा नित्यस्योक्ताः शरीरिणः 2,28
   नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि, नैनं दहति पावकः।
   न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः ॥2,23
   अच्छेद्योऽयमदाह्योऽयमक्लेद्योऽशोष्य एव च।
   नित्यः सर्वगतः स्थाणुरचलोऽयं सनातनः ॥2.24
3. आत्मा पर शाब्दिक दृष्टि से विशेष विचार 'आत्मदर्शन' में किया गया है।
4. इस पर अधिक विचार 'जीवन दर्शन' में किया गया है।
5. जैसे कि जल (आपोमयः प्राणः) वायु, प्राणधारण, जीवनसाधन, पुत्र, परमेश्वर, आजीविका, दूध, ताजा मक्खन, मज्जा।

प्रार्थना

-ले० श्रीमती शकुन्तला शास्त्री, आदर्श नगर, 533/14 कैथल (हरियाणा)

प्रार्थना-प्र + अर्थना = प्रकर्षेण अर्थना = याचना। अर्थात् प्रार्थना करने वाले व्यक्ति को अत्यधिक आवश्यकता होनी चाहिए।

किससे प्रार्थना करनी चाहिए ?

परमात्मा से, माता से, पिता से और गुरु से, इनसे मांगने पर ही हमारी याचना स्वीकार होगी।

अब प्रश्न यह है कि प्रार्थना करने वाला जिस चीज़ को मांग रहा है वह उसका अधिकारी भी है या नहीं।

महर्षि दयानन्द ने परम पिता परमात्मा से ओ३म् विश्वानि देव: सवितर्दुरितानि परासुव।

यद् भद्रं तन्न आसुव।

इस वेद मन्त्र से बार-बार प्रार्थना की है। अपने वेद भाष्य के प्रत्येक अध्याय के प्रारम्भ में ईश्वर से सहायता के लिए प्रार्थना की है। यह महर्षि का प्रियतम मन्त्र है।

किसी भी मतमतान्तर को मानने वाला मनुष्य इस मन्त्र से बिना संकोच प्रार्थना कर सकता है। इस प्रकार की प्रार्थना सब प्रकार की साम्प्रदायिकता से मुक्त होती है। सभी मनुष्य दुरित-बुराई से बचना चाहते हैं और भद्र को कल्याणकारी गुण कर्म स्वभाव को प्राप्त करना चाहते हैं। परमात्मा के गुण कर्म और स्वभाव अनन्त हैं इसलिए प्रभु के नाम भी अनन्त हैं। इस मन्त्र में परमेश्वर को दो नामों से सम्बोधित किया है वे ये है-देव और सविता। ये दोनों शब्द विचार करने योग्य हैं।

"देव" शब्द की परिभाषा महर्षि यास्क ने इन शब्दों में की है- "देवो दानाद्वा दीपनाद्वा द्योतनाद्वा द्युस्थानो भवति इति वा"

अर्थात् निरन्तर दान करने वाले, प्रकाश प्रदान करने वाले, विद्युत की भांति द्योतन = चमकने वाले, द्युस्थान = अन्तरिक्ष में स्थित रहने वाले = सूर्य, चन्द्र नक्षत्रादि = तारकगण को देव कहते हैं।

पृथिवी, जल, अग्नि, वायु, आकाश ये भी देव हैं।

प्रस्तुत मन्त्र में "सवित:" दूसरा शब्द है। "सविता प्रसविता भवति" प्रसविता = जनयिता = जन्मदाता उत्पत्ति कर्ता होता है। सविता शब्द अधिकतर सूर्य के अर्थ प्रयोग किया जाता है। सूर्य = प्रेरक और गतिदाता होता है।

देव और सविता शब्दों पर इनके संगत और वैज्ञानिक अर्थो पर विचार करना उचित होगा। मन्त्र में प्रार्थना याचना की गई है-हे देव! सवित:! आप हमारे दुरित-दु: = बुरा, इत = चलन आचरण अर्थात् दुर्गुणों, दुष्कर्मों, दु:स्वभावों को दूर कर दीजिए और जो कल्याणकारी सद्गुण, सत्कर्म और सत्स्वभावों को हमें प्राप्त कराइए।

इस प्रार्थना में जो याचना की गई है सद्गुण सत्कर्म सत्स्वभाव प्राप्त करने की क्या हममें योग्यता है ? यह योग्यता प्राप्त करने के लिए शर्त रखी गई है-हममें दुर्गुणी प्रवृत्ति, दुष्कर्म का आचरण तथा बुरा स्वभाव न हों। प्रार्थना उसी की स्वीकार होती है जो वास्तव में ज़रूरतमन्द हो और याचना की गई बातों पर आचरण करने का दृढ़ निश्चयी हों अर्थात् अपने मन में कभी भी बुरी बातों को न आने दें। बुरे दुगुर्णों को दुष्कर्म के विचार को दु:स्वप्न की भांति दूर हटा दें और बार-बार मन को उन बुरे विचारों के लिए लज्जित करें प्रताड़ित करें। मन में बुरे विचार न आएं इसके लिए निम्न मन्त्रों का जाप करें-

यजाग्रतो दूरमुदैति देवं तदु सुप्तस्य तथैवैति।

दूरं गमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मे मन: शिवसंकल्प मस्तु॥

इन शिवसंकल्प के छ: मन्त्रों का जाप करने से व उनके अर्थो पर श्रद्धा पूर्वक विचार करने से मन में आने वाले पापी दुगुर्णों के विचार दूर हो जाएंगे। पाप भरे दुगुर्णी विचारों को प्रताड़ित करना ही पड़ेगा।

प्रार्थना करने वाले में दुरित दूर करने के लिए दृढ़ इच्छा शक्ति का होना अति आवश्यक है। सर्वत्र सांसारिक लोगों की प्रवृत्ति देखी जाती है कि जहां से जो वस्तु प्राप्त होती है वहीं जाकर उसे प्राप्त किया जाता है-

पुत्र को पढ़ाना हो तो जहां पढ़ाने वाले होते हैं। पुत्र को सत् शिक्षा देने वालों के पास पिता ले जाता है। वह सत् शिक्षा देने वाले विद्यालयों की जांच पड़ताल करने के बाद ही अपने पुत्र को उनके पास पढ़ने हेतु भेजता है। पढ़ाने वाला अध्यापक आचार्य की योग्यता वाला हो। आचार्य की परिभाषा यह है-

महर्षि यास्क "निरुक्त" में लिखते हैं-

आचार्य: कस्मात् ?

आचार्य कौन होता है ? आचार्य किसे कहते हैं ?

"आचारं ग्राहयति आचिनोति अर्थान् आचिनोति बुद्धिम् इति वा॥"

अर्थात्-आचार्य अपने शिष्यों को सदाचार, सद्गुणाचार ग्रहण कराता है-शास्त्रों के अर्थो को उनके पाठ्य विषयों को शिष्यों की बुद्धि में इस प्रकार निवेश करता है जिससे उनकी बुद्धि पढ़ाए गए अर्थों को अच्छी प्रकार से समझ सके ग्रहण कर सके। सद्गुणों, सत्कर्मों, सदाचरण के महत्त्व को समझ सकें। इसको जीवन में ढाल सकें। मननशील मनुष्य बन सके।

इस प्रकार "देव" शब्द से विदुषी माता, विद्वान् पिता और विद्वान आचार्य अर्थ का ग्रहण होता है।

महर्षि दयानन्द जी ने "सत्यार्थप्रकाश" के द्वितीय समुल्लास के प्रारम्भ में लिखा है-

"मातृमान् पितृमान् आचार्य-वान् पुरुषो वेद"

वही मनुष्य ज्ञानवान् विद्यावान् सदाचारी सद्गुणी सत्कर्म करने वाला, सत्स्वभाव वाला बन सकता है जिसको विदुषी माता, विद्वान् पिता और विद्वान् आचार्य उत्तम शिक्षक के रूप में मिलते हैं।

प्रार्थना मन्त्र में प्रार्थी ने परमात्मा को सवित:। कहकर पुकारा है- सविता का अर्थ है जन्म देने वाले माता, पिता और सूर्य हैं। सविता-सूर्य शब्द पर विचार करते हैं- "सविता-प्रसविताभवति" सूर्य-किरणें सभी प्राणियों को जीवन दान करती हैं। सूर्य की ऊष्मा प्रदूषित वायु को प्रदूषण रहित करके बहने के लिए प्रेरित करती है। संसार में सभी जीवों, पेड़-पौधों आदि में जीवन संचार करती है। मानव मात्र सूर्य के प्रकाश में ही मनुष्य बनने का पाठ माता-पिता, आचार्य से पढ़ता है।

प्रार्थना के मन्त्र में "विश्वानिदु-रितानि परासुव" अर्थात् याचक अपने सम्पूर्ण दुरित दुर्गुण आदि एक साथ दूर करने को उत्सुक हैं।

सम्पूर्ण दुरित-दुर्गुणों को साधारण याचक कदापि छोड़ नहीं सकता। इसके लिए तो सांसारिक भोगों के प्रति उदासीन होना ही पड़ेगा। उपदेश तो उत्तम है कि समस्त दुर्गुण एक साथ त्याग देने चाहिए-

किसी को कहा जाए कि यह दुर्गन्ध युक्त कूड़ा कर्कट फैंक आओ तब वह उस कूड़े की टोकरी को एकदम बिना सोचे बिना देखे फैंक देगा।

किसी को यह कहा जाए कि यह दूध उस बर्तन में डाल दो तब वह कूड़े की तरह फैंकेगा नहीं बल्कि दूध की धार बनाकर और यह ध्यान रखकर कि कहीं दूध इधर-उधर न गिर जाए। इसका ध्यान रखकर दूसरे बर्तन में डालेगा।

बस यही तो प्रार्थना में समझाया है-

"यद्भद्रं तन्न आसुव" इस दूसरी पंक्ति में "भद्रम" एक वचन का प्रयोग किया है-

कल्याणकारी गुण एक-एक करके प्राप्त हो जाए। जैसे विद्यालय में एक-एक अक्षर और एक-एक अंक बोलना लिखना पढ़ना सिखाया जाता है। उसी प्रकार सद्गुण, सत्कर्म, सद्स्वभाव भी परमात्मा से एक-एक करके मांगे है।

यदि हम इस एक मन्त्र पर अच्छी प्रकार अर्थपूर्वक विचार करें और उसके अनुसार आचरण करके जीवन में धारण करें तब हमारे सफल जीवन का सूत्रपात होगा। जीवन सफल होगा।

महर्षि दयानन्द सैमीनार हाल का शिलान्यास

दिनांक 23 फरवरी 2013 को डी.ए.एन. कालेज आफ एजुकेशन फार वूमैन नवांशहर में महर्षि दयानन्द सैमीनार हाल का नींव पत्थर रखा गया। कार्यक्रम का शुभारम्भ हवन यज्ञ से किया गया जिसमें प्रबन्धक कमेटी के सभी सदस्यों तथा कालेज के स्टाफ ने भाग लिया। इसके बाद प्रबन्धक कमेटी के प्रधान श्री विनोद भारद्वाज जी ने महर्षि दयानन्द सैमीनार हाल का नींव पत्थर रखा। इस अवसर पर उन्होंने कहा कि इस हाल को बनाने का मुख्य उद्देश्य महर्षि दयानन्द की शिक्षाओं का प्रचार एवं प्रसार करना है। इस अवसर पर श्री सुरेन्द्र मोहन तेजपाल, श्री ललित मोहन पाठक, श्री जिया लाल शर्मा, श्री कुलवन्त राय, श्री अमित शर्मा, श्री अरविन्द नारद, श्रीमती इन्दुमति गौतम, कालेज का स्टाफ तथा अन्य गणमान्य व्यक्ति उपस्थित थे। **-अरविन्द नारद प्रचार मंत्री**

स्वामी जी के बाकी तेरह प्रश्नों के उत्तर

-ले० खुशहालचन्द्र आर्य, गोविन्द राम आर्य एण्ड सन्स, 180 महात्मा गांधी रोड, कोलकत्ता

मैंने पिछले लेख में फरुखाबाद में पौराणिक पण्डितों द्वारा किए गए पच्चीस प्रश्नों में से बारह प्रश्नों के उत्तर स्वामी दयानन्द जी द्वारा दिए गए लिख दिए थे। बाकी तेरह प्रश्नों के उत्तर इस लेख में प्रस्तुत कर रहा हूं, जो इसी भांति है।

प्रश्न 13. ज्योतिष-शास्त्र के फलित-भाग को क्या आप मानते हो ? क्या भृगु-संहिता आप्त ग्रन्थ हैं ?

उत्तर-हम ज्योतिष-शास्त्र के फलित-भाग को नहीं मानते, किन्तु गणित भाग को मानते हैं। ज्योतिष के जितने सिद्धान्त ग्रन्थ हैं उनमें फलित का लेश भी नहीं है। भृगु-संहिता में गणित है इसलिए उसे हम मानते हैं। ज्योतिष शास्त्र के सिद्धान्त ग्रन्थों में भूत-भविष्यत् काल का ज्ञान नहीं लिखा है और न ही उनमें मनुष्य वे सुख-दु:ख के ज्ञान का लेख है।

प्रश्न 14. ज्योतिष-सिद्धान्त में आप किस ग्रन्थ को सिद्धान्त-ग्रन्थ स्वीकार करते हैं ?

उत्तर-जितने भी वेदानुकूल ग्रन्थ हैं उन सबको हम आप्त ग्रन्थ मानते हैं।

प्रश्न 15. क्या आप पृथ्वी पर सुख-दु:ख, विद्या, धर्म और मनुष्य संख्या की न्यूनता और अधिकता मानते हैं ? यदि मानते हैं तो क्या पहले इनकी वृद्धि थी ? अब है ? अथवा आगे होगी ?

उत्तर-हम पृथ्वी पर सुखादि की वृद्धि सापेक्ष होने से अनित्य मानते हैं और मध्यम अवस्था में बराबर स्वीकार करते हैं।

प्रश्न 16. धर्म का क्या लक्षण है ? ईश्वरकृत सनातन है अथवा मनुष्य कृत ?

उत्तर-धर्म का लक्षण पक्षपात-रहित न्याय है और सत्य का ग्रहण तथा असत्य का परित्याग है। वह वेद प्रतिपादित और ईश्वर कृत सनातन है।

प्रश्न 17. यदि कोई ईसाई, मुसलमान आपके मत में दृढ़ विश्वासी हो जाए तो क्या आपके अनुयायी उसे अपने में मिला लेंगे और उसका बनाया भोजन खा लेंगे ?

उत्तर-वेद ही हमारा मत है। बड़े शोक और अन्धेर की बात है कि आप लोगों ने केवल खान-पान, शौच-स्नान, वेश-भूषा और उठने-बैठने आदि को ही धर्म मान रखा है। ये तो अपने-अपने देशों की रीतियां है।

प्रश्न 18. क्या आपके मत में ज्ञान के बिना मुक्ति हो जाती है ?

उत्तर-परमेश्वर सम्बन्धी ज्ञान के बिना किसी की मुक्ति नहीं होती। जो धर्म पर आरुढ़ होगा उसे ज्ञान भी अवश्य होगा।

प्रश्न 19. श्राद्ध करना क्या शास्त्रानुसार है ? शास्त्रानुकूल नहीं तो पितृ-कर्म का क्या अर्थ है ? क्या मनुस्मृति आदि ग्रन्थों में इसका विधान मिलता है ?

उत्तर-जीवित पितरों को श्राद्ध से, सेवा से, पुरुषार्थ से और पदार्थों से तृप्त करना श्राद्ध है। ऐसा ही श्राद्ध का विधान वेद में मिलता है। मनुस्मृति में भी जो लेख वेदानुकूल है वही मानने योग्य है।

प्रश्न 20. कोई मनुष्य यह समझ कर आत्मघात कर ले कि मैं पापों से नहीं बच सकता तो क्या ऐसा करने में कोई पाप होता है ?

उत्तर-आत्मघात करने में पाप ही होता है। पापाचरण के फल भोगे बिना कोई मनुष्य पापों से नहीं बच सकता।

प्रश्न 21. जीवात्मा असंख्य है अथवा संख्या सहित ? क्या कर्मवश मनुष्य पशु और वृक्षादि की योनियों में जा सकता है ?

उत्तर-ईश्वर के ज्ञान में जीवों की संख्या है, परन्तु अल्पज्ञान में वे असंख्य हैं। पाप-कर्मों की अधिकता से जीव, पशुओं और वनस्पतियों की योनियों में जाता है।

(नोट-इस उत्तर में महर्षि दयानन्द ने पेड़-पौधों में जीव माना है।)

प्रश्न 22. क्या विवाह करना उचित है ? सन्तान प्राप्ति से किस को पाप लगता है ?

उत्तर-जो जन पूर्ण विद्वान् और जितेन्द्रिय होकर सबका उपकार करना चाहें, उन्हें तो विवाह करना उचित नहीं है। जो मनुष्य ऐसा नहीं कर सकते उन्हें विवाह करना चाहिए। वेदानुसार करके ऋतुगामी रहते जो सन्तान प्राप्त हो उसमें कोई दोष नहीं है। व्याभिचार अन्याय है। इसलिए उससे उत्पन्न हुई सन्तान दोषयुक्त होती है।

प्रश्न 23. क्या अपने सगोत्र में विवाह सम्बन्ध करना दूषित है ? यदि है तो क्यों ? क्या सृष्टि की आदि में ऐसा हुआ था ?

उत्तर-सगोत्र में विवाह करने से शरीर और आत्मा की यथावत् उन्नति नहीं होती और बल तथा प्रेम भी ठीक-ठीक नहीं बढ़ता। इन दोषों के कारण भिन्न गोत्र में विवाह करना उचित है। सृष्टि के आदि में तो गोत्र ही नहीं थे। इसलिए उस समय का प्रश्न करना व्यर्थ प्रयास है।

प्रश्न 24. गायत्री के जाप से कोई फल भी होता है या नहीं ? यदि होता है तो क्यों ?

उत्तर-वेद में गायत्री के अर्थानुसार आचरण करना लिखा है। इसलिए वैदिक विधि से गायत्री का जप किया जाए तो उत्तम फल प्राप्त होता है। किया हुआ कोई भी अच्छा और बुरा कर्म निष्फल नहीं जाता।

प्रश्न 25. धर्माधर्म मनुष्य के अन्तरंग भावों से सम्बन्ध रखता है अथवा बाहर के परिणामों से ? यदि कोई मनुष्य किसी डूबते मनुष्य को बचाने के लिए नदी में कूद पड़े और आप भी डूब जाए तो क्या उसे आत्मघात का पाप लगेगा ?

उत्तर-धर्माधर्म मनुष्य की बहिरङ्ग सत्ता से होते हैं। इनको कर्म और सुकर्म-कुकर्म भी कहा जाता है। परोपकार के लिए परिश्रम करते यदि बीच ही में प्राणान्त हो जाए तो भी वह मनुष्य पुण्य-पुञ्ज उपार्जन कर लेता है। ऐसे जीव को पाप कदापि नहीं लगता।

ऊपर लिखे प्रश्नोत्तर आर्य समाज फर्रूखाबाद में सुनाए गए और फिर "भारत सुदशा प्रवर्तक" नाम के पत्र में प्रकाशित कराए गए।

मेरा इन प्रश्नोत्तरों को लिखने का एक मात्र उद्देश्य यही है कि ये प्रश्न हर धार्मिक व जिज्ञासु व्यक्ति के मन में उठते रहते हैं। इनका महर्षि दयानन्द ने बहुत ही सार्थक ढंग से तथा वेदानुकूल उत्तर दिए हैं, जिनको पढ़कर हर व्यक्ति अपने ज्ञान की वृद्धि कर सकेगा और अपने जीवन में धारण करके बहुत से अन्धविश्वासों तथा पाखण्डों से बचते हुए अपने जीवन को सफल बना सकेगा। इसी में मैं अपने परिश्रम की सार्थकता समझूंगा।

हवन के बाद दी विदाई पार्टी

दिनांक 20-2-2013 को बरनाला, गांधी आर्य सीनियर सैकंडरी स्कूल में +1 के विद्यार्थियों ने +2 की छात्राओं को विदायगी पार्टी दी। आर्य संस्था की परम्परा के अनुसार +2 की विदायगी के अवसर पर पहले हवन किया गया। तदुपरान्त छात्राओं ने रंगारंग कार्यक्रम प्रस्तुत किए। इस अवसर पर स्कूल के डायरैक्टर डा० एच. कुमार कौल ने विद्यार्थियों को शुभकामनाएं दी एवं उनके उज्जवल भविष्य की कामनाएं कीं। उन्होंने हवन के इतिहास और महत्त्व पर प्रकाश डाला। साथ ही साथ हवन से होने वाले लाभों के बारे में छात्रों को अवगत करवाया। उन्होंने बताया कि पहले राजे-महाराजे हीरे, जवाहरात, सोना, चांदी जैसे बहुमूल्य वस्तुएं हवन में अर्पित करते थे। स्वामी दयानन्द ने इसका सरलीकरण करके इसे आम आदमी के लिए सुलभ बनाया। विदाई के अवसर पर उन्होंने कहा कि देश में भ्रष्टाचार, अत्याचार, हिंसा और अनैतिकता समाज में अपने पैर जमा चुकी है। आप राष्ट्र के भाग्य-विधाता हैं। आप ही इन कुरीतियों को दूर कर सकते हैं। आप आर्य समाज के सच्चे वालन्टियर हैं। आप समाज को तभी बदल सकते हैं यदि आपके सोचने, कहने और करने में पवित्रता हो। अन्त में उन्होंने छात्रों को शुभाशीष देते हुए कहा-"आप आने वाली हर परीक्षा में सफल हों, आवश्यकता है मन में आत्म-विश्वास की।"

-प्रो० सुमन

गायत्री मन्त्र की उपयोगिता

-ले० आचार्य भगवानदेव वेदालंकार "वैदिक प्रवक्ता"

"गायत्री मन्त्र की महिमा" चारों वेदों में, स्मृति ग्रन्थों में उपनिषदों में, महाभारत में, ऋषियों, मुनियों, विद्वान् आचार्यों ने मुक्त कण्ठ से गाई है। गायत्री दुःखहरणी, पापनाशनी, सुखदायनी, बुद्धि प्रदायनी अनुपम गरिमाशालिनी मन्त्र है। जो निम्न प्रकार है-

ओ३म् भू भुर्वः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्।।

-ऋग्वेद मण्डल 3, सूक्त 62, मन्त्र 10

-यजुर्वेद अध्याय 36 मन्त्र 3/30 अ० 2/अध्याय 3-35

-सामवेद उत्तरार्थिक 13-3-मन्त्र 3

यह सुप्रसिद्ध गायत्री मन्त्र है। इसकी रचना गायत्री नामक छन्द में हुई है। 24 अक्षरों वाला प्रसिद्ध गायत्री मन्त्र वैदिक मन्त्रों में उच्चतम स्थान रखता है। वेद में गायत्री छन्द के मन्त्र और भी अनेक हैं परन्तु ऋषियों ने इस मन्त्र की विशेषता के कारण दैनिक उपासना के लिए गायत्री मन्त्र का विशेष रूप से विधान किया है। इस मन्त्र का देवता 'सविता' से सम्बन्ध के कारण इसका नाम "सावित्री-मन्त्र" भी है। इसका महातम्य, प्रभाव, बड़प्पन, ऊंचा होने के कारण इसको "गुरुमन्त्र", "महामन्त्र" नाम से भी जाना जाता है। मन्त्र में यद्यपि 23 अक्षर हैं, परन्तु सर्वप्रथम 'ओ३म्' रहता है इसलिए 24 अक्षर हो जाते हैं। कुछ आचार्य 'ओ३म्' के बिना मन्त्र का महत्त्व नहीं मानते। इसलिए गायत्री मन्त्र का आरम्भ 'ओ३म्' के उच्चारण के साथ ही करते हैं।

गायत्री मन्त्र में तीन व्याहृति-गायत्री मन्त्र के आरम्भ में "भूः भुवः स्वः" ये तीन पद व्याहृति, ईश्वर के अनेक विशेष गुणों, भावों के प्रत्येक पद कहे जाते हैं। वह ओ३म् परमात्मा 'भूः' स्वयं भू सत्ता वाला है। प्राणों का रक्षक हैं। उसे किसी ने नहीं बनाया है। उसका कोई कारण नहीं है। परमात्मा 'भुवः' है। दुःख विनाशक है। सृष्टि को बनाने वाला है। चेतनस्वरूप है। परमात्मा 'स्वः' सुखस्वरूप है। आनन्द का भण्डार है। उसकी सत्ता में दुःख का लेशमात्र भी स्थान नहीं है।

गायत्री का प्रथम पद ओ३म्-गायत्री मन्त्र का सबसे प्रथम पद 'ओ३म्' है। वह परमात्मा का निज नाम है जो सबसे उत्तम नाम है। ओ३म् स्वरूप ईश्वर एक ही है। सृष्टिकर्त्ता है। सबका परम रक्षक है। उस ईश्वर के नाम अनेक हैं। जिस समय संसार में सर्वत्र विपत्ति और संकट के बादल मंडराते हैं, ऐसे निराशा भरे वातावरण में वह ओ३म् स्वरूप, परम रक्षक परमेश्वर ही हमारी रक्षा करते हैं।

एतदालम्बनं श्रेष्ठमेतदालम्बनं परम।

एतदालम्बनं ज्ञात्वा ब्रह्म-लोके महीयते।।

इस ओ३म् नाम का सहारा सर्वोत्तम है। इस सहारे को जान लेने से मनुष्य ब्रह्मलोक को प्राप्त कर लेता है।

"तत्सवितुर्वरेण्यम्"-गायत्री मन्त्र में भगवान को 'सविता' के रूप में वरण करने की, अपनाने की प्रार्थना की गई है जो 'सविता' बनकर हमें प्रेरणा देता है। ज्ञान का प्रकाश करता है। समस्त जगत् को उत्पन्न करता है और सबका स्वामी है। समग्र ऐश्वर्य युक्त है। सब दुःखों का नाशक है। ऐसे उस सविता देव को हम अपनाएं।

"भर्गो देवस्य धीमहि"-जो परमेश्वर भर्गः स्वरूप है। जो सर्वश्रेष्ठ, सबसे पवित्र, सबसे अच्छा और तेज स्वरूप है। भगवान के उस उत्तम तेज का, प्रकाश का हम श्रद्धा, भक्ति और एकाग्र भाव से ध्यान करें जो दिव्य गुणों से युक्त, आनन्द एक रस तथा सुखों को प्रदान करने वाला परम देवादि महादेव है उसका ही सदा ध्यान करें।

"धियो यो न प्रचोदयात्"-गायत्री मन्त्र में भगवान सविता से जो उत्तम बुद्धि का दाता है। परम शुद्ध तेजोमय और पाप को भून डालने वाला है, वरण करने के योग्य हैं, वह परमेश्वर हमारी बुद्धि को उत्तम मार्ग की ओर प्रेरित करें। हमारी बुद्धि सत्संग, स्वाध्याय, यज्ञ, ईश्वर-चिन्तन, परोपकार, सेवा, दान आदि श्रेष्ठ कर्मों में लगे। इसलिए कहा गया है-

"विनाशकाले विपरीत बुद्धि"-विपरीत बुद्धि, कु बुद्धि विनाशकारी होती है। तुलसीदास जी ने ठीक ही कहा है-

जहां सुमति तहां सम्पत्ति नाना।

जहां कुमति तहां विपत्ति निधाना।।

संसार में यह देखने में आता है कि जहां सुबुद्धि होती है वहां सब कार्य सफल होते हैं। सम्पत्ति बढ़ती है और जहां दुष्ट बुद्धि होती है वहां अशान्ति कार्यों में विघ्न, असफलता, अवनति, निराशा बनी रहती है। इसलिए मन्त्र में उत्तम 'धी' बुद्धि के लिए प्रार्थना की गई है। इसलिए गायत्री मन्त्र बुद्धि-प्रदाता मन्त्र भी कहा जाता है।

श्रीमती विद्यावती गौड़ जी नहीं रहीं

स्त्री आर्य समाज स्वामी दयानन्द बाजार लुधियाना की सक्रिय कार्यकर्त्ता एवं वरिष्ठ सदस्य श्रीमती विद्यावती जी गौड़ का 19 फरवरी 2013 को 95 वर्ष की आयु में देहावसान हो गया। वह स्वर्गीय सुमनायति जी की बहन थीं और आर्य समाज और वेद की अनन्य भक्त थीं। जीवन के अति संघर्षमय होने पर भी उन्होंने कभी परमात्मा पर अपना विश्वास नहीं खोया। स्त्री आर्य समाज स्वामी दयानन्द बाजार की वह आजीवन सदस्य रहीं। उनका सारा परिवार आर्य समाज के रंग में रंगा हुआ है। स्त्री आर्य समाज स्वामी दयानन्द बाजार लुधियाना की सभी बहनों ने उन्हें अपनी भावभीनीं श्रद्धांजलि अर्पित की। **-जनक रानी आर्या**

महर्षि दयानन्द हवन समिति ने किया हवन का आयोजन

महर्षि दयानन्द हवन समिति अबोहर के जिला संयोजक अशोक शर्मा शास्त्री के नेतृत्व में गौशाला रोड पर स्थित आर्य समाज मंदिर में हवन यज्ञ का आयोजन किया गया। इस अवसर पर आर्य समाज के प्रधान श्री सोहन लाल सेतिया ने यज्ञ के महत्व पर प्रकाश डाला और कहा कि आर्य युवक संस्कारों से दूर होते जा रहे हैं। आज का युवा वर्ग यदि महर्षि दयानन्द के दस नियमों को ही अपना लेता है तो उसका जीवन सफल बन जाता है। इस अवसर पर आर्य समाज के महासचिव श्री सुशील मेहता जी, महर्षि दयानन्द हवन समिति के जिला प्रधान श्री शरद जी सेतिया, श्री माधव पैडीवाल, श्री नितिन वधवा, श्री अक्षित मक्कड़, श्री सागर ग्रोवर, श्री केवल कृष्ण सेतिया, श्री राजपाल छोड़ा भी शामिल थे।

वार्षिक पुरस्कार वितरण समारोह

आर्य कालेज धूरी में दिनांक 17-02-2013 दिन रविवार को वार्षिक पुरस्कार वितरण समारोह का आयोजन किया गया। सबसे पहले मुख्य अतिथि महाशा प्रतिज्ञापाल जी का स्वागत किया गया। इसके बाद ज्योति प्रचण्ड की गई तथा बच्चों द्वारा गायत्री मन्त्र के साथ समारोह की शुरुआत की गई। गायत्री मंत्र को बच्चों ने बड़ी खूबसूरत कला से प्रस्तुत किया। महाशा प्रतिज्ञापाल जी का स्वागत कालेज के प्रिंसीपल धर्मदेव जी, प्रधान श्री जसवीर रत्न जी, मैनेजर पवन कुमार गर्ग, उप-प्रधान महाशा सोमप्रकाश आर्य, उप-प्रधान प्रहल्लाद जी, उप-प्रधान अशोक जिंदल जी, डॉ० रामलाल जी गोयल, वासुदेव आर्य जी, पंडित अमरेश शास्त्री जी तथा आर्य स्कूल के मैनेजर श्री विरेन्द्र गर्ग तथा अन्य सभी कमेटी सदस्यों द्वारा किया गया। इस समारोह में कालेज के लगभग 170 लड़कियों ने भाग लिया तथा कालेज की तरफ से सभी 170 लड़कियों को श्रीमती गोमती देवी ट्रस्ट की ओर से पुरस्कार वितरण किए गए। वार्षिक उत्सव पर बच्चों ने एक से बढ़कर एक उत्साह से प्रोग्राम पेश किए। इस अवसर पर कालेज के सदस्य श्री रामपाल आर्य ने मंच का संचालन बड़े अच्छे ढंग से किया तथा कालेज में इस वर्ष हुए कार्यों पर रोशनी डाली। उन्होंने बताया कि सभी कमेटी सदस्यों के सहयोग से कालेज के मैनेजर पवन कुमार गर्ग के आवश्यक प्रयास से हमने इस वर्ष एम. ए. हिन्दी पार्ट-I शुरू की है। वार्षिक उत्सव सुबह 10.00 बजे से लेकर शाम 4.00 बजे तक सम्पन्न हुआ। अन्त में शान्ति पाठ के साथ मैनेजर पवन कुमार गर्ग जी ने आए हुए सभी मेहमानों का धन्यवाद किया। **-पवन कुमार गर्ग प्रबन्धक**

सत्य का महत्त्व

-ले० नरेन्द्र आहूजा 'विवेक' 502 जी. एच. 28 सैक्टर 20 पंचकूला

सत्य बराबर तप नहीं झूठ बराबर पाप। सत्य का मनुष्य के जीवन में बहुत महत्व है इसीलिए क्रान्तदर्शी देव दयानन्द ने आर्य समाज के पहले पांच नियमों में सत्य के महत्व को स्थापित करते हुए सत्य शब्द का प्रयोग किया है। चौथे नियम में तो स्पष्ट निर्देश दिया है कि "सत्य को ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।" महर्षि दयानन्द ने सत्य को परिभाषित करते हुए कहा है "जो पदार्थ जैसा है, उसको वैसा ही कहना, लिखना और मानना सत्य कहलाता है। व्यवहारभानु में देव दयानन्द मनुष्य के जीवन में सत्य के महत्व को स्थापित करते हुए लिखते हैं" सब मनुष्यों को अत्यन्त उचित है कि झूठ को सर्वथा छोड़कर सत्य ही से सब व्यवहार करें, जिससे धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को प्राप्त होकर सदा आनन्द में रहें।

सत्य के महत्व को स्थापित करते हुए वेद भगवान भी "ऋतस्य धीतिर्वृजनानि हन्ति" ऋ. ४।२३।८ अर्थात् सत्य का आचरण पापों को नष्ट कर देता है। इसे दूसरे शब्दों में कहें तो सत्य का आचरण मनुष्य को पापों से दूर कर देता है। झूठे अंधेरों की चट्टानें कितनी मजबूत क्यों ना हों सत्य के सूर्य के उदय होने के आभास मात्र से टूट कर खत्म हो जाती है। सत्य के सामने झूठ कभी नहीं टिक सकता और अंत में सदा सत्य की विजय होती है। सत्य की महिमा का वर्णन करते हुए महाभारत में कहा गया है "सत्यं स्वर्गस्य सोपानम्।" अर्थात् सत्य स्वर्ग की सीढ़ी है। मनुष्य की हर मनोकामना सत्य से ही पूरी होती है। सत्य का मार्ग चाहे जितना भी कांटों से भरा कष्ट से परिपूर्ण क्यों ना हो लेकिन सत्य के मार्ग पर चलकर मनुष्य अपने जीवन के लक्ष्य को अवश्य प्राप्त कर लेता है। सत्य से ही धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की प्राप्ति होती है अत: मनुष्य को कभी किसी भी विपरीत परिस्थिति में भी सत्य को नहीं छोड़ना चाहिये। सत्य वह दिव्य दीपक है जो मनुष्य के आन्तरिक तम अविद्या को नष्ट भ्रष्ट कर देता है।

जो व्यक्ति सदा सत्य बोलता है समाज के लोग सदा उसकी बातों पर विश्वास करते हैं। सत्यवादी के साथ लोग नि:शंक और निश्चिंत होकर व्यवहार करते हैं क्योंकि वे जानते हैं कि सत्यवादी व्यक्ति हमें धोखा नहीं देगा। इससे समाज के लोगों को सुख मिलता है। सत्यवादी सदा सत्यवादी को अपने हर कार्य के लिए परिवार समाज के लोगों का समर्थन मिलता है और समाज का समर्थन मिलने से उसका उत्साह बढ़ता है और वह सदा प्रसन्न रहता है। सत्य बोलने वालों की समाज में प्रतिष्ठा बढ़ती है और पूर्ण सत्यवादियों का यश युगों तक बना रहता है। सत्य बोलने वाले को कभी किसी के सामने बोलने में डर नहीं लगता और उसे कभी मानसिक तनाव नहीं होता अच्छी निश्चिंत नींद आती है। शरीर के सभी अंग-प्रत्यंग स्वस्थ रहते हैं। सत्यवादी सदा प्रसन्न, रोगमुक्त निश्चिंत रहता है। सत्यवादी की सभी योजनाएं पूरी होती हैं क्योंकि उसे अपनी सभी योजनाओं के लिए जब परिवार समाज का सहयोग मिलता है क्योंकि जनता को उसके सत्य आचरण के कारण पूरा विश्वास होता है कि सत्यवादी उनके सहयोग का सदा सदुपयोग ही करेगा। इसलिए सत्यवादी का भविष्य सदा उज्ज्वल होता है। सत्य बोलने से परिवार समाज और राष्ट्र में परस्पर विश्वास और प्रेम का वातावरण बनता है जिससे सभी को सुख मिलता है।

सत्य के महत्व को स्थापित करते हुए ही वेद भगवान ने मनुष्य मात्र को आदेश दिया "वाच: सत्यमशीय।' अर्थात मैं अपनी वाणी में सत्य को प्राप्त करूं। इससे आगे बढ़कर सत्य के साथ माधुर्य को धारण करने का निर्देश देते हुए कहा गया **सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयान ब्रूयात्सत्यमप्रियम्।** मनुस्मृति अर्थात् सत्य बोलो, प्रिय भाषा में बोलो, सत्य को कटु भाषा में मत बोलो। क्योंकि मनुष्य का शरीर आत्मा का मंदिर, सर्व अन्तर्यामी परमात्मा का निवास है अतएव इसे सदा सत्य आचरण से स्वच्छ रखें और कभी झूठ बोलकर गंदा ना करें। सरलता को रथ और सत्य को शस्त्र बनाकर जीवन के संग्राम में कूद पड़ो क्योंकि 'सत्यमेव जयते नानृतम्' सदा सत्य की ही विजय होती है असत्य की नहीं। इसीलिए मनुष्य के लिए यही श्रेयस्कर है कि वह जीवन में सदा सत्य व्रतों को धारण करे।

मानव और धर्म

-ले० सुरेश कुमार शास्त्री पुरोहित सभा कार्यालय जालन्धर

मन की संतान मानव कहलाती है। जिसकी व्युत्पति मन् अवबोधने धातु से होती है। मनुष्य उसे कहते हैं, जो "मत्वा कर्माणि सीव्यति" अर्थात् सोच विचार कर कर्म करें। कर्तव्य पालन का नाम धर्म है। जंगलों में रहने वाले आदिवासी, चोर, डाकू, तक कुछ धार्मिक मान्यताओं में विश्वास रखते हैं। विद्वान और मूर्ख सभी में धार्मिक विश्वास देखने को मिलता है। इस विश्वास ने मानव जाति का बहुत कल्याण किया है। जितना उत्साह और उल्लास इस धार्मिक विश्वास से मनुष्य में उत्पन्न होता है, उतना और किसी भी प्रकार से उत्पन्न नहीं हो सकता। जितना त्याग भाव धर्म सिखाता है या जैसा आत्मबल धर्म उत्पन्न करता है, वैसा त्याग एवं आत्मबल दूसरे साधन से प्राप्त नहीं किया जा सकता। धर्म के भाव से भावित मनुष्य बड़े से बड़ा बलिदान करने को तैयार हो जाता है। आखिर वह कौन सा भाव था जिसने महाराजा दशरथ को प्राण हारकर भी वचन नहीं हारने दिया और श्रीराम को वन जाने में कोई कष्ट नहीं हुआ। असहाय दुखों को सहकर भी सीता अपने पथ से विचलित नहीं हुई। महाराणा प्रताप और छत्रपति शिवाजी ने जंगलों की खाक छानी। वीर बन्दा वैरागी ने अपनी बोटी-2 कटवा दी। गुरू तेगबहादुर और वीर हकीकत ने धर्म के लिए अपनी गर्दन कटवाना स्वीकार किया। निसन्देह धर्म सदा ही मनुष्य की उन्नति में बहुत बड़ा साधन रहा है और आगे भी रहेगा।

जहाँ धार्मिक विश्वास ने मानव को त्याग बलिदान के लिए प्रेरित किया है। वहाँ धार्मिक उन्माद और अन्धविश्वास ने बहुत बड़ी हानियाँ पहुँचाई है। धर्मान्ध लोगों ने धर्म के नाम पर लाखों लोगों को मौत के घाट उतार दिया, कितने ही जिन्दा अग्नि में जला दिए गए। स्त्रियों का स्तीत्व लूटा गया। पशुओं को मारकर यज्ञ जैसे पवित्र कार्य को कलंकित किया गया। देवी-देवताओं को खुश करने के लिए नरबलियाँ दी गई। बुद्धि संगत बात कहने वालों को जेलों में ठूस दिया गया। सच पूछो तो धर्म के नाम पर जितना कत्लेआम हुआ है उतना अब तक ज्ञात महायुद्धों में भी नहीं हुआ है। इन्हीं अत्याचारों से तंग आकर वाममार्ग जैनमत की ओर आकर्षित हुए। धर्म के प्रति यह आक्रोश धर्म और सम्प्रदाय के भेद को न जानने के कारण हुआ। धर्म उन शाश्वत मूल्यों का नाम है जो मानव मात्र के लिए एक जैसे हैं जिन्हें मानने से कोई इन्कार नहीं कर सकता। जैसे सत्य बोलना, चोरी न करना, किसी निरपराध को पीडा न देना, संयम सदाचार का जीवन न्याय व्यवहार आदि से कौन मना कर सकता है। धर्म सार्वभौम होता है और वह मानव मात्र के लिए एक ही प्रकार होता है। मनु महाराज ने मनुस्मृति में धर्म का लक्षण बताते हुए लिखा है कि-

धृति क्षमा दमोऽस्तेयं
"शौचमिन्द्रियं निग्रह:।
धीर्विद्या सत्यम अक्रोधो
दशकं धर्मलक्षणम्।।"

धर्म के नाम पर जो मतभेद दिखलाई पडते हैं वह धर्म न होकर मत या सम्प्रदाय कहे जा सकते हैं। धर्म की परिभाषा करते हुए महर्षि वेदव्यास ने लिखा है कि-

धारणात् धर्म इत्याहु: धर्मो
धारयते प्रजा:।

जो प्रजा का धारण करें उसे धर्म कहते हैं। "धर्म के नाम पर लडना, आरक्षण की मांग करना कभी भी प्रशंसनीय कार्य नहीं कहा जा सकता। धार्मिक उन्माद फैलाकर राष्ट्र की एकता भंग करना बुद्धिमत्ता नहीं है। आज आवश्यकता है धर्म के वास्तविक स्वरूप को पहचाने की।

भारत के विद्वानों ने धर्म, अर्थ, काम मोक्ष की प्राप्ति करना मानव जीवन का उद्देश्य बतलाया है। अर्थ और काम धर्म के फल है।

जहाँ इनकी प्राप्ति धर्म का परित्याग करके की जाती है, वहाँ अशान्ति, असन्तोष और असन्तुलन ही बढेगा और आसुरी भावों में वृद्धि होगी। व्यक्तियों की सारी चेष्टाएं सुख प्राप्ति के लिए होती है परन्तु बिना धर्म के सुख प्राप्त नहीं होता। कौटिल्य अर्थशास्त्र में कहा गया है-

सुखस्य मूलम् धर्म:।

धर्म सुख का मूल है। अधर्म से संचित अर्थ अनर्थ का हेतु बनता है। जिस कार्य से धर्म, अर्थ और काम तीनों की सिद्धि होती है वही कार्य करना चाहिए। धर्मरहित अर्थ और काम के लिए पुरूषार्थ करना प्रशस्त नहीं है। जैसे कहा भी गया है-

आहार निद्रा भयमैथु नञ्च
समानमेतत्पशुभिर्नराणाम्।
धर्मो हि तेषामधिको विशेषो,
धर्मेण हीना पशुभि: समाना:।

अर्थात् आहार, निद्रा, भय और मैथुन ये चारों पशु और मनुष्य में समान रूप से पाये जाते हैं। धर्म ही मनुष्य को पशु से अलग करता है। धर्म से रहित मनुष्य पशु के समान है। अत: धर्म के बिना अर्थ का कोई लाभ नहीं होता है। इसलिए मनुष्य को धर्म के बिना कोई कार्य नहीं करना चाहिए।

पृष्ठ 1 का शेष- अमृत और आत्मा.....

जन्म शब्द (जनि (प्रादुर्भावे) प्रकट होना) पैदा होने के अर्थ में आता है। जब कोई चीज़ बनती है या पैदा होती है, तो उसका बनाने वाला कुछ वस्तुओं को लेकर अपने साधनों के आधार पर बनाता है। जैसे हलवाई बर्फी बनाने के लिए दूध को आग पर रखता है, दूध उबल-उबल कर गाढ़ा होता जाता है, फिर उसमें यथासमय मीठा डालता है। इस प्रकार दूध बाह्य रूप में कई परिवर्तनों के बाद बर्फी के रूप में सामने आता है। इसीलिए यास्काचार्य ने निरुक्त[1] में लिखा है, कि कोई चीज़ पहले पैदा होती है, इसके बाद वह अस्तित्व में आती है और फिर उसमें कई प्रकार के परिवर्तन आते हैं और वह तब बढ़ती है तथा फिर उसमें किसी प्रकार की क्षीणता भी आती है और अन्त में वह चीज किसी समय किसी न किसी प्रकार से नष्ट (= आंखों से ओझल) हो जाती है। इस प्रकार प्रत्येक पैदा होने वाली वस्तु इतनी क्रियाओं से निकलती है। पैदा होने वाली चीज़ों में कई चीज़ों का मेल होता है। पैदा होने वाली चीज़ को कार्य और जिन के मेल से वह बनती है, उनको कारण कहते हैं। कारण के गुणों का कार्य पर प्रभाव होता है।[2] यथा रोटी रूपी कार्य का आटा, पानी, आग आदि कारण होते हैं। दूसरी पैदा होने वाली वस्तुओं की तरह हमारे जन्म (जीवन) के रूप में आत्मा, मन और इन्द्रिय (शरीर) का मेल होता है। शरीर शब्द सारे धड़ के लिए आता है। शरीर में ऊपर से लेकर नीचे तक आंख, कान, नाक, त्वचा, जिह्वा के रूप में पांच ज्ञान इन्द्रियां हैं, जो रूप, शब्द, गन्ध, स्पर्श और रस का ज्ञान (अनुभव) कराती हैं। वाणी, हाथ, पैर, मल, मूत्र इन्द्रियां कर्मेन्द्रियां हैं। जो बोलने, पकड़ने, छोड़ने, चलने और मल-मूत्र त्याग आदि का कार्य करती हैं।[3] हमारे शरीर में सांस लेने-छोड़ने का और शरीर धारण का कार्य प्राण, अपान, व्यान, समान, उदान आदि करते हैं। प्राण के ये मुख्य पांच भेद हैं और पांच ही उपभेद हैं, जो नाग, कर्म, कुकल, देवदत्त तथा धनञ्जय कहलाते हैं।

शरीर में संचरण करने वाले वायु = प्राण = श्वास-प्रश्वास एक ही है, पर उस एक वायु को ही शरीर के अलग-अलग अंगों में रह कर अलग-अलग ढंग का कार्य करने के कारण ही प्राण, अपान, समान आदि नाम से पुकारते हैं।[4] जैसे कि हृदय में रहने के कारण प्राण, मलद्वार वाले को अपान, नाभिप्रदेश में रहने वाला समान, कण्ठ में रहकर अपना कार्य करने वाला उदान और सारे शरीर में विचरण करने वाले वायु को व्यान नाम से पुकारा जाता है।

कई बार बाहर के लिए जाने वाले शुद्ध वायु को या बाहर से लेना क्रिया को प्राण मान दिया जाता है और अन्दर से अशुद्ध होकर बाहर जाने वाले को या बाहर जाने की क्रिया को अपान नाम से पुकारा जाता है।

प्राणों के सम्बन्ध में वेद, उपनिषद आदि अनेक शास्त्रों में विस्तृत वर्णन प्राप्त होता है।[5] प्राण-मुख तथा नासिका द्वारा बाहर से अन्दर आता है और चक्षु, श्रोत्र आदि इन्द्रियों में रहता है। बाहर निकले वाले श्वास को अपना कहते हैं। यह मल-मूत्र द्वार में विशेष रूप में रहता है। मल, मूत्र, वीर्य, गर्भ आदि का बाहर आना इसी के सहयोग से होता है। शरीर के मध्यभाग, नाभि में समान रहता है, जोकि खाए, पिए को पचाता है तथा उस रस को शरीर में सर्वत्र बांटता है। इस के विकृत होने पर मन्दाग्नि, भूख न लगना, वायु विकार आदि रोग हो जाते हैं। उदान कण्ठ में रहता है, इसके द्वारा बोलने-गाने आदि की क्रिया होती है। इसके विकृत होने पर आवाज खराब, मन्द या बन्द हो जाती है तथा कण्ठ रोग होते हैं। उदान के सहयोग से ही अन्तिम समय प्राण निकालते हैं। व्यान सारे शरीर की नाड़ियों में घूमता है, जिस से रस, खून की गति का संचार होता है और पसीना आता है। जैसे हम आंख से बाहर के दृश्यों को देखते हैं, वैसे ही हमारे अन्दर भी सोचने, निर्णय लेने, पिछली यादें याद करने और मैं तथा मेरे पन की भावना जिन के द्वारा होती है, उन को अन्त:करण = अन्दर की इन्द्रिय कहते हैं और ये मन, बुद्धि, चित्र, अहंकार के नाम से चार हैं।

1. जायते, अस्ति, विपरिणमते, वर्धते, अपक्षीयते, विनश्यति 1,1,1
2. कारणगुणपूर्वक: कार्यगुणो दृष्ट: वैशेषिक 2,1,24
3. श्रोत्रं त्वक चक्षुषी जिह्वा नासिका चैव पञ्चमी।
   पायूपस्थं हस्तपादं वाक्चैव दशमीस्मृता॥
   बुद्धीन्द्रियाणि पञ्चैषां श्रोत्रादीन्यनुपूर्वश:।
   कर्मेन्द्रियणि पञ्चैषां पाप्वादीनि प्रचक्षते॥
   एकादशं मनोज्ञेयं स्वगुणेनोभयात्मकम्।
   यस्मिञ्जिते जितावेतौ भवत: पञ्चकौ गणौ॥ मनुस्मृति 2,90-92

प्रभु प्राप्ति के लिए विद्वान व संयमी से ज्ञान आवश्यक

-ले० डॉ० अशोक आर्य 104-शिप्रा अपार्टमैंट, कौशाम्बी

मानव सदा ही प्रभु की शरण में रहना चाहता है किन्तु वह उपाय नहीं करता जो, प्रभु शरण पाने के अभिलाषी के लिए आवश्यक होते हैं। यदि हम प्रभु की शरण में रहना चाहते हैं तो हमारी प्रत्येक चेष्टा, प्रत्येक यत्न बुद्धि को पाने के उद्देश्य से होना चाहिये। दूसरे हम सदा ज्ञानी, विद्वान हों, संयमी हों, ज्ञानी हों। ऐसे लोगों के समीप रहते हुये हम उनसे ज्ञान प्राप्त करते रहें। इस बात को ही यह मन्त्र अपने उपदेश में हमें बता रहा है। मन्त्र हमें इस प्रकार उपदेश कर रहा है :-

इन्द्रा याहि धियेषितो विप्रजूता: सुतावत:।
उप ब्रह्माणि वाघत:॥ ऋग्वेद १.३.५॥

इस मन्त्र में चार बातों की ओर संकेत किया गया है :

१. जीव ने विगत में जो परमपिता परमात्मा से प्रार्थना की थी, उस का उत्तर देते हुये पिता इस मन्त्र में हमें उपदेश कर रहे हैं कि हे इन्द्रियों के अधिष्ठाता जीव ! हे इन्द्रियों को अपने वश में कर लेने वाले जीव। अर्थात प्रभु उस जीव को सम्बोधन कर रहे हैं, जिसने अपनी इन्द्रियों को अपने वश में कर लिया है। उस पिता का एक नियम है कि वह पिता उसे ही अपने समीप बैठने की अनुमति देता है, उसे ही अपने समीप स्थान देता है, जो अपनी इन्द्रियों के अधीन न होकर अपनी इन्द्रियों को अपने अधीन कर लेता है, जो इन्द्रियों की इच्छा के वश में नहीं रहता अपितु इन्द्रियां जिसके वश में होती है। अत: इन्द्रियों पर आधिपत्य पा लेने में सफल रहने वाला जीव जब उस प्रभु को पुकारता है तो ऐसे जीव की प्रार्थना को प्रभु अवश्य ही स्वीकार करता है तथा जीव को कहता है कि हे इन्द्रियों को अपने वश में रखने वाले जीव तू आ मेरे समीप आकर स्थान ले, मेरे समीप आ कर बैठ।

२. हे जीव ! तू अपने सब प्रयास, सब यत्न, सब कर्म बुद्धि को पाने के लिए, बुद्धि को बढ़ाने के लिए ही करता है। तू सदा बुद्धि से ही प्रेरित रहता है। बुद्धि सदा तुझे कुछ न कुछ प्रेरणा करती रहती है। तू जितने भी कार्य करता है, वह सब तू या तो बुद्धि से करता है अथवा तू जो भी करता है, वह सब बुद्धि को पाने के यत्न स्वरूप करता है। तेरी सब प्रेरणाएं बुद्धि को पाने के लिए प्रेरित विद्वान तथा सूक्ष्म बुद्धि से युक्त आचार्यो से, गुरुजनों से प्रेरित होकर एकत्र किया है। इतना ही नहीं तू अब भी उत्तम बुद्धि को पाने के लिए अपनी अभिलाषा को बनाए हुए है। इस कारण तू ने अब भी उत्तम विद्वान पुरूषों की शरण को नहीं छोडा है, सूक्षम अर्थात इतनी बुद्धि का स्वामी होने पर भी बुद्धि पाने का यत्न तूने छोड़ा नहीं है अपितु अब भी तू इसे पाने के लिये निरन्तर प्रयास में लगा है।

४. हे उत्तम बुद्धि के स्वामी जीव ! तू सोम का सम्पादन करने वाला है। तू प्रतिक्षण अपने जीवन में ऐसे यत्न, यथा प्राणायाम, दण्ड, बैठक आदि में व्यस्त रहता है, जिन से सोम की तेरे शरीर में उत्पति होती ही रहती है। तू ने अपना जीवन इतना संयमित व नियमित कर लिया है कि सोम का कभी तेरे शरीर में नाश हो ही नहीं सकता अपितु सोम तेरे शरीर में सदा ही रक्षित है। इतना ही नहीं तू सदा ऐसे लोगों का, ऐसे विद्वानों का, ऐसे गुरुजनों का साथ पाने व सहयोग लेने के लिए, मार्ग-दर्शन पाने के लिए यत्नशील रहता है, जो सोम को अपने यत्न से अपने शरीर में उत्पन्न कर, उसकी रक्षा करते हैं। सोम रक्षण से वह मेधावी होते है। ऐसे मेधावी व्यक्ति के, ऐसे ज्ञान के भण्डारी के, ऐसे संयमी व्यक्ति के समीप रह कर तू उससे ज्ञान रूपी बुद्धि को और भी मेधावी बनाने के लिए यत्न शील है।

4. प्राणस्त्वेक एव हृदादिनानास्थानवशान्मुखनिर्गमनादिनानाक्रियावशाच्च नानासंज्ञां लभते। न्यायसिद्धान्तमुक्तावली-1,43
   हृदि प्राणोगुदे अपान:, समाननाभिमण्डले।
   उदानकण्ठदेशे स्याद् व्यान: सर्वशरीरग:॥
5. तान् वरिष्ठ: प्राण उवाच। अहमेवैतत्पंचधाऽऽत्मानं प्रविभज्यैतद् बाणमवष्टम्य विधारयामि। प्रश्न उप. 2,3
   यथा सम्राडेवाधिकृतान् विनियुङ्क्ते, एतान् ग्रामानेतान् ग्रामानधितिष्ठस्वेत्येव- मेवैष प्राण इतरान् पृथक् पृथगेव संनिधत्ते।4॥ पायूपस्थेऽपानं चक्षु: श्रोत्रे मुखनासिकाम्याम् प्राण: स्वयं प्रतिष्ठते, मध्ये तु समान:। एष ह्योतद्धुतमन्नं समं नयति।5॥ आसु (नाडीषु) व्यानश्चरति।6॥ अथैकयोर्ध्व उदान: पुण्येन पुण्यं लोकं नयति।7॥ प्रश्न-3
6. वायुस्तन्त्रयन्त्र घर:प्रवर्तकश्चेष्टानामुच्चावचानां, नियन्ता प्रणेता च मनस: सर्वेन्द्रियाणामुद्योजक:, सर्वेन्द्रियार्थानामभिवोढा, सर्वशरीरधातुव्यूहकर:, सन्धानकर: शरीरस्य, समीरणोऽग्ने:, क्लेदसंशोषण: क्षेप्ता बहिर्मलानां स्थूलाणुस्रोतसां भेत्ता- चरक सूत्र 12,8

माघ माह गायत्री महायज्ञ सम्पन्न

आर्य समाज मन्दिर माडल टाऊन जालन्धर में विगत 53 वर्षों से चल रहा गायत्री महायज्ञ इस वर्ष भी अत्यन्त श्रद्धा व उत्साहपूर्वक मनाया गया। यह महायज्ञ व प्रवचन माला पूरा माघ महीना चलता रहा। यह कार्यक्रम स्त्री आर्य समाज के तत्वावधान में किया जाता है। इस कार्यक्रम की सबसे बड़ी विशेषता है कि इसमें पौराणिक, सिख, आर्य समाज की माताएं-बहनें सज्जन भी उपस्थित होते हैं। इस बार का यह विशाल प्रोग्राम 13 जनवरी से 12 फरवरी तक चलता रहा। प्रतिदिन समारोह में कई सहस्त्र, स्त्री पुरुषों ने यज्ञ में पूर्णाहुति डाली। यज्ञ का समय प्रतिदिन दोपहर 2.30 से सायं 4.30 बजे रखा गया था। 1 घंटा यज्ञ के बाद भजन एवं 45 मिनट प्रवचन नियमित होते रहे। कार्यक्रम में प्रथम 10 दिन मुरादाबाद से आए हुए आचार्य महावीर मुमुक्षु के उपदेश होते रहे। उन्होंने अपने प्रवचनों में महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती जी के मानव जाति पर महान उपकार तथा आर्य समाज की विशेषता पर अत्यन्त प्रेरणा दायक प्रसंग जनता के सामने प्रस्तुत किए।

उनके पश्चात् आचार्य ऊषर्वुध जी (जयपुर) ने भिन्न-भिन्न प्रसंगों पर जैसे सत्यार्थ प्रकाश के महत्त्व, महापुरुषों के जीवन की भिन्न-भिन्न शिक्षाप्रद घटनाओं का वर्णन करते हुए हर प्रकार से आगे बढ़ने की प्रेरणा दी। इस एक महीने के यज्ञ के अन्दर सारे त्योहार बड़ी श्रद्धापूर्वक मनाए गए। इन विशेष कार्यक्रमों में दयानन्द माडल स्कूल, माडल टाऊन जालन्धर के छात्र, छात्राओं ने गीत, भजन एवं भाषणों से सबको अपने संस्कृति एवं सभ्यताओं से अवगत कराया।

इस यज्ञ में बाहर से भजनीक नहीं बुलाया जाता, परन्तु हमारी माताएं, बहनें श्रीमती रशमी घई जी, रजनी सेठी जी, किरण मरवाह जी, सरला सेतिया जी, प्रोमिला अरोड़ा जी, विभा आर्या जी, मालती तलवाड़ जी, दमयन्ती सेठी जी, प्रधाना सुशीला भगत जी ने सुन्दर मधुर भजन प्रस्तुत किए।

इस यज्ञ के बीच में डा. सुषमा चोपड़ा, श्रीमती डा. कुमुद पसरीचा, डा. दिपाली लूथरा ने कैंसर एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी कई जानकारियां दी कि कैसे हम निरोग रह सकते हैं। साथ में उन्होंने हर दूसरे, तीसरे, छठे महीने में शरीर की जांच करवाना अति आवश्यक बताया। विशेष करके महिलाओं को।

6 फरवरी को स्वामी विष्वांग जी अजमेर से पधारे। उन्होंने अपने प्रवचनों में योग के आठ अंगों के विषय में यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि के विषय में गहन चिन्तन दिया। उन्होंने नित्यप्रति 15 से 20 मिनट ध्यान भी करवाया। गायत्री मंत्र के ऊपर चर्चा करते हुए कहा कि ईश्वर से हमें मांगना या प्रार्थना करना नहीं आता। जो कार्य मनुष्य कर सकता है वो परमात्मा नहीं कर सकता, जो परमात्मा करता है वह मनुष्य नहीं कर सकता ये विशेष अन्तर है। फिर भी हम अल्पज्ञ मानव थोड़े से पैसा, प्रसाद चढ़ा कर सौदा करके ईश्वर से कितना कुछ मांग लेते हैं, परन्तु परमात्मा ऐसा नहीं करता है क्योंकि वो तो न्यायकारी, दयालु हैं, इसलिए सबके ऊपर कृपा किए हुए हैं। इसलिए हम मनुष्यों को सोच समझ कर प्रार्थना, मांगना चाहिए। इस प्रकार निरन्तर 11 फरवरी तक यज्ञ, भजन, प्रवचन चलता रहा।

12-2-13 को पूर्णाहुति समारोह 31 हवन कुण्डों में दोपहर 2 बजे प्रारम्भ हुआ। प्रत्येक हवन कुण्ड में यजमानों ने श्रद्धापूर्वक आहुतियां डालीं। विशेष रूप से गुरुकुल करतारपुर के ब्रह्मचारी भी इस पावन यज्ञ में शामिल हुए। वहां के प्रधान श्री चतुर्भुज मित्तल जी एवं उनका पूरा परिवार पधारे हुए थे। इस पूर्णाहुति के अवसर में स्वामी विष्वांग जी ने कहा कि समाज की दशा को सुधारने के लिए पहले अपने जीवन में सुधार लाने की ज़रूरत है। समारोह की अध्यक्षता डा० सुमन जी लुधियाना जी ने की। डा० सुचरिता शर्मा ए. पी. जे. कालेज जी ने कहा कि बच्चों को अच्छे संस्कार देना महिलाओं की ज़िम्मेदारी है, इसलिए महिलाओं को अपना दायित्व ठीक ढंग से निभाना चाहिए, उन्हें अपनी रक्षा करने के लिए किसी पर निर्भर रहने की ज़रूरत नहीं है, बल्कि अपनी रक्षा आप करनी चाहिए। प्रि० डा० आतिमा शर्मा कन्या महाविद्यालय ने कहा कि जिस भी क्षेत्र में कोई कार्य करो उसे तन, मन और समर्पण भाव से करना चाहिए। पश्चात् रश्मि घई जी ने नारी जाति की अस्मिता पर कविता "सीता और गीता मेरी दो राज दुलारी हैं" सुनाई जिसे सुनकर श्रोता भावुक हो गए। मन्त्राणी प्रोमिला अरोड़ा जी ने वार्षिक रिपोर्ट पढ़कर सुनाई। इस बार के कार्यक्रम का विशेष आकर्षण ये था कि सबसे प्रथम दिन प्रधाना जी के परिवार, श्रुति कपूर, सोनम भगत और भी कई युवा वर्ग बहु-बेटियां समाज से जुड़े और कई नए सदस्य भी बने किटी के। आर्य समाज के प्रधान श्री अरविन्द घई जी ने भी पूर्णाहुति वाले दिन आहुति डाली तथा पुण्य के भागी बने। प्रधाना श्रीमती सुशीला भगत जी ने सभी अतिथियों का, आए हुए सभी भद्रपुरुषों का धन्यवाद किया। इस मौके पर प्रधाना जी ने डा० सुषमा चावला, डा० सुषमा चोपड़ा, प्रि० डा० सरिता वर्मा, बी. डी. आर्य कालेज जालन्धर कैन्ट, डा० कुमुद पसरीचा, दमयन्ती सेठी जी, सरला सेतिया जी, प्रि० विनोद चुघ जी, राजेन्द्र बिज जी व अन्य अतिथियों को बुके भेंटकर सम्मानित किया। इस शुभावसर पर रवि मित्तल, देवी सूरी, प्रधान अरविन्द घई, मन्त्री अजय महाजन, कमलेश सेठी, बाला मधोक, सरिता बिज, कांता अरोड़ा, उषा मेहता, नीरू कपूर, सोम्या घई, गोकल चन्द भगत आदि मौजूद थे। अन्य समाजों से मन्त्री, प्रधान श्री रंजीत आर्य, ओम प्रकाश अग्रवाल, श्री राजीव भाटिया, श्री राजेश प्रेमी अतिथि रहे। शान्ति पाठ के पश्चात् प्रसाद वितरण के साथ कार्यक्रम समाप्त हो गया।

-श्रीमती प्रोमिला अरोड़ा

शोक समाचार

दोआबा कालेज जालन्धर के प्रिंसीपल नरेश कुमार धीमान की धर्मपत्नी श्रीमती ऊषा रानी धीमान जी का दिनांक 24.2.2013 को देहावसान हो गया है। उनका अंत्येष्टि संस्कार सोमवार 25.2.2013 को किशनपुरा शमशान घाट में वैदिक मंत्रोच्चारण के साथ किया गया। इस अवसर पर गुरु विरजानन्द स्मारक ट्रस्ट करतारपुर के ब्रह्मचारियों ने मंत्रोच्चारण के साथ सम्पन्न करवाया। जिसमें उनका सहयोग पंडित मनोहर लाल जी आर्य, पंडित सत्यदेव ने किया। इस मौके पर आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रधान एवं गुरुकुल कांगडी विश्वविद्यालय के चांसलर श्री सुदर्शन शर्मा जी, सभा उप प्रधान श्री सरदारी लाल जी आर्य रतन, उप प्रधान चौधरी ऋषिपाल सिंह, उप प्रधान श्री देविन्द्र नाथ जी शर्मा, श्री रणजीत आर्य सभा मंत्री, श्री सोहन लाल जी सेठ जालन्धर, श्री देशबन्धु जी चोपडा फगवाडा, श्री शादी लाल महेन्द्रु बंगा, श्री कमल किशोर जी, श्री सत्य शरण जिन्दल जी, श्री ओम प्रकाश जी अग्रवाल, श्री राजिन्द्र विज, श्री राजेश अमर प्रेमी, श्री राजीव भाटिया, श्री इन्द्र कुमार शर्मा, श्री नरेश कुमार मल्हन आर्य समाज मुहल्ला गोविन्दगढ़ भी मौजूद थे। इस अवसर पर कई धार्मिक, सामाजिक एवं शिक्षण संस्थाओं के प्रतिनिधि भी पधारे।

चुनाव सम्पन्न

आर्य समाज गांधी नगर-1 में दिनांक 17-2-2013 को साप्ताहिक सत्संग के उपरान्त श्री जगदीश लाल जी की अध्यक्षता में चुनाव हुआ। जिसमें सर्वसम्मति से श्री राजपाल को प्रधान, श्री ईशरदास सपरा को कोषाध्यक्ष, श्री अनिल कुमार को मन्त्री के पद के लिए चुना गया।

-राजपाल प्रधान आर्य समाज

आर्य समाज बठिंडा का चुनाव

आर्य समाज बठिंडा का चुनाव को श्री कुलवन्त राय जी अग्रवाल की अध्यक्षता में हुआ जिसमें सर्वस्मति से श्री निहाल चन्द जी एडवोकेट प्रधान चुने गए। वरिष्ठ उप-प्रधान श्री वेद प्रकाश जी रामां चुने गए। श्री चमन लाल मेहता महामन्त्री, श्री विनोद कुमार कोषाध्यक्ष और श्री गोरी शंकर खनगवाल उप-मन्त्री चुने गए। बाकी कार्यकारिणी प्रधान जी की आज्ञा से बनाई गई। 1. श्री कुलवन्त राय जी संरक्षक, 2. श्री नवनीत कुमार उप-प्रधान, 3. श्री अशवनी कुमार उप-प्रधान, 4. श्री रजिन्द्र कुमार उप-प्रधान, 5. श्रीमती इन्दिरा छाबड़ा उप-प्रधान, 6. अनिल कुमार लेखी उप-मन्त्री, 7. एम. सी. अरोड़ा उप-मन्त्री, 8. बृज मैहता प्रचार मन्त्री।

-चमन लाल मैहता महामन्त्री

स्वामी दयानन्द सरस्वती पीठ की स्थापना

हिमाचल विश्वविद्यालय शिमला में स्वामी दयानन्द सरस्वती पीठ की स्थापना हो गई है तथा इसे सक्रिय भी कर दिया गया है। इससे सम्बन्धित विज्ञप्ति की एक प्रति आर्य प्रतिनिधि सभा हिमाचल प्रदेश को प्राप्त हो चुकी है। इससे वैदिक धर्म एवं संस्कृति के वैज्ञानिक अनुसंधान कर्त्ताओं तथा वेदों एवं वैदिक वाङ.गमय के शोधकर्त्ताओं को सुविधाएं एवं प्रेरणा मिलेगी। वे इस विश्वविद्यालय में शोध कार्य कर सकेंगे। हिमाचल आर्य प्रतिनिधि सभा इस पीठ की स्थापना के लिये निरन्तर प्रयास करती रही। यह आर्य जगत के लिये अति हर्ष का विषय है।

वेद वाणी

विशंविशं मघवा पर्यशायत जनानां धेना अवचाकशद् वृषा।
यस्याह शुक्रः सवनेषु रण्यति स तीवैः सोमैः सहते पृतन्यतः॥

विनय-इन्द्र नारायण हरेक मनुष्य के हृदयकुटीर में आकर लेटे हुए हैं, हम इसे जानते हों या न जानते हों। सबमें चुपके से लेटे हुए ये नारायण प्रत्येक मनुष्य की ज्ञानक्रियाओं को भी साक्षात् देख रहे हैं, बल्कि उन ज्ञानक्रियाओं को अपने प्रकाश से प्रकाशित कर रहे हैं। ये नारायण हममें जागते तब हैं जब कि इन्हें अपने इस ज्ञान की, अपने श्रेष्ठ से श्रेष्ठ ज्ञान की, भेंट चढ़ाई जावे, जब यह सोमरस इन्हें पिलाया जावे। सर्वश्रेष्ठ भक्ति और सर्वश्रेष्ठ सोमसवन, तत्त्वज्ञान का निष्पादन ही है। भगवान् इसी के भूखे हैं। इसी के लिए प्रत्येक के अन्दर बैठे उसकी ज्ञानक्रियाओं को निहार रहे हैं। हरेक ही मनुष्य कुछ न कुछ अपना सोमसवन कर रहा है, हरेक मनुष्य कभी न कभी विवेक करने, तत्त्वज्ञान के खोजने और ज्ञान का निष्कर्ष निकालने के लिए बाधित होते हैं; अतः वे सबके अन्दर बैठे धैर्य से प्रतीक्षा कर रहे हैं। यह सच है कि जिसके अन्दर यथेच्छ सोमरस को पाकर वे भगवान् जाग उठते हैं वह निहाल हो जाता है। उसमें ऐसा अद्भुत सामर्थ्य प्रकट होता है कि उसके सामने संसार की कोई भी शक्ति ठहर नहीं सकती। बस, देर यही है कि वे किसी के सोमसवन को स्वीकार कर लेवें, किसी को अपना लेवें। जिसे वे अपना लेते हैं, वर लेते हैं उसके सामने तो वे अपने सम्पूर्ण सर्वसमर्थ रूप में, अपने सम्पूर्ण 'शक्र' और 'वृषा' रूप में प्रकट हो जाते हैं। सचमुच ज्ञान ही सर्वोच्च शक्ति है। ज्ञानी ही संसार के विकट से विकट पाप-आक्रमणों को सह सकता है। ज्ञान के बिना शैतान की फौजों के सामने कोई नहीं ठहर सकता; 'प्रसंख्यान' के सर्वश्रेष्ठ ज्ञान के भी प्रभु-अर्पण कर देने पर भक्त योगी को अपनी धर्ममेघ समाधि में जो सोम की वर्षा मिलती है उन तीव्र सोमों (उच्च ज्ञानों) के सामने शैतान की सैकड़ों आक्रमणकारी फौजें भी एक क्षण में परास्त हो जाती हैं; सब पाप और क्लेश खत्म हो जाते हैं।

साभार-वैदिक विनय, प्रस्तुति-रणजीत आर्य

युग प्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती जी

प्राचीन भारतीय सभ्यता और संस्कृति का आधार चार वेद है। वेद ही हमारी संस्कृति, संस्कार और धरोहर है। जब मूलशंकर (महर्षि दयानन्द जी) का जन्म हुआ तब भारत में चारों तरफ कुरीतियों का बोलबाला था। समाज में फैले हुए अज्ञान और अन्धकार को दूर करने के लिए जब मथुरा में दयानन्द जी ने गुरु विरजानन्द जी की कुटिया का दरवाजा खटखटाया तो अन्दर से आवाज आई कि कौन है ? तब दयानन्द जी ने कहा कि यही जानने के लिए ही आपके पास आया हूँ कि मैं कौन हूँ ? गुरू जी से शिक्षा पाने के बाद गुरू आज्ञा का पालन करते हुए पुनः वैदिक धर्म का प्रचार करते हुए 17 बार विष पिया और पत्थर भी खाये, फिर भी अपना पूर्ण जीवन वेद प्रचार में समर्पित कर दिया। महर्षि दयानन्द ने सर्वप्रथम आर्य समाज की स्थापना 1875 को मुम्बई में की और कहा **"वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।"** स्त्री वर्ग के उत्थान के लिए जो महर्षि दयानन्द जी ने किया यह शायद ही किसी और ने किया। चाहे वह स्त्री शिक्षा या फिर विधवा के पुनः विवाह की बात हो महान् ग्रन्थ "सत्यार्थप्रकाश" की रचना करके महर्षि दयानन्द जी ने मानव जाति पर बहुत बड़ा उपकार किया। अगर हम पिछले 200 वर्ष के इतिहास को देखे तो महर्षि दयानन्द जी जैसा समाज सुधारक कोई भी दिखाई नहीं देता। महर्षि दयानन्द जी ने कभी भी अपने लिए ना चाहा, ना मांगा और ना संग्रह किया। देश, धर्म, जाति और मानवता का दर्द उन्हें सदा बेचैन करता था।

महर्षि दयानन्द जी के बतलाये हुए मार्ग को जीवन निर्माण का वैदिक सूत्र मानकर हम भी शिवरात्रि को बोधरात्रि बना सकते है।

भारत का कर गया बेड़ा पार वो मस्ताना योगी।

-दिनेश कुमार आर्य युवक सभा शक्तिनगर, अमृतसर।

गुरुकुल का आयुर्वेद महान घर-घर में मिले रोगों से निदान

100 गुरुकुल शताब्दी

गुरुकुल च्यवनप्राश
सभी के लिए स्वादिष्ट, रुचिकर, पौष्टिक रसायन।

गुरुकुल मधु
गुणवत्ता एवं ताज़गी के लिए

गुरुकुल पायोकिल
पायोरिया की आयुर्वेदिक औषधि दांतों में खून रोके, मुंह की दुर्गन्ध दूर करे, मसूड़ों के रोग, ढीले दांत ठीक करे।

गुरुकुल चाय
खाँसी, जुकाम, इन्फ्लूएंजा व थकान में अत्यंत उपयोगी।

गुरुकुल शतशिलाजीत सूर्यतापी
पुष्टीदायक, बलवर्धक शरीर में नया खून और उत्साह का अनुभव

गुरुकुल ब्राह्मी रसायन
बुद्धिवर्धक, स्फूर्तिदायक, दिमागी कमजोरी दूर करे।

गुरुकुल मधुमेह नाशिनी गुटिका
मधुमेह एवं प्रत्येक प्रकार के प्रमेह में लाभदायक

अन्य प्रमुख उत्पाद
गुरुकुल द्राक्षारिष्ठ
गुरुकुल रक्तशोधक
गुरुकुल अश्वगंधारिष्ट

गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी, हरिद्वार डाकघर : गुरुकुल कांगड़ी-249404, ज़िला-हरिद्वार (उत्तरांचल) फोन : 0134-416073

शाखा कार्यालय : 63, गली राजा केदार नाथ, चावड़ी बाज़ार, दिल्ली-6, फोन : 23261871

श्री प्रेम भारद्वाज महामन्त्री, सम्पादक, प्रकाशक, मुद्रक द्वारा आर. के. प्रिंटर्स प्रैस, टाण्डा फाटक जालन्धर से मुद्रित होकर आर्य मर्यादा कार्यालय, गुरुदत्त भवन, चौक किशनपुरा, जालन्धर से इसकी स्वामिनी आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिए प्रकाशित हुआ। E-mail: apspunjab2010@gmail.com

आर्य मर्यादा में प्रकाशित सारी लेखन सामग्री से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं। प्रत्येक विवाद के लिए न्याय क्षेत्र जालन्धर होगा।